आचार्य गुणधर

जीवन-परिचय : शास्त्र रचना करनेवाले जैन आचार्यों की परंपरा में सर्वप्रथम आचार्य गुणधर का नाम आता है। ये अपने समय के विशिष्ट ज्ञानी विद्वान् थे। ये कर्म सिद्धान्त के बहुत बड़े ज्ञाता थे।

आप सर्वप्रथम श्रुत-प्रतिष्ठापक (शास्त्रों की प्रतिष्ठा करने वाला) के रूप में जगत में प्रसिद्ध हैं। इन्हें दिगम्बर परंपरा में लिखित रूप में प्राप्त श्रुत (शास्त्रों) का प्रथम कर्ता माना जाता है।

आचार्य गुणधर को पंचम पूर्व गत 'पेज्जदोसपाहुड' और 'महाकम्म-पयडिपाहुड' का ज्ञान प्राप्त था। अर्थात् इन्हें साक्षात् तीर्थंकर की परम्परा का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त था। तीर्थंकर के ज्ञान को इन्होंने आत्मसात् (ग्रहण) कर लिया था।

आचार्य वीरसेन ने लिखा है कि—

आचार्य गुणधर मति के धारी एवं त्रिभुवन को जाननेवाले हैं, इनके द्वारा लिखित ग्रन्थ कसायप्राभृत महासमुद्र के समान है और आचार्य गुणधर उस समुद्र के पारगामी हैं, अर्थात् उस महासमुद्र को पार करनेवाले हैं।

आचार्य गुणधर का समय विक्रम पूर्व प्रथम शताब्दी सिद्ध होता है।

रचना-परिचय : आचार्य गुणधर ने श्रुतज्ञान का दिन-प्रतिदिन लोप होते देखकर श्रुतविच्छेद के भय से और प्रवचन-वात्सल्य से प्रेरित होकर 180 गाथासूत्रों का निर्माण किया और उस विषय को स्पष्ट करने के लिए 53 गाथाओं का निर्माण किया।

1. कषायपाहुड : गुणधराचार्य ने 'कषायपाहुड', जिसका दूसरा नाम 'पेज्जदोसपाहुड' है उसकी रचना की है। 16000 पद प्रमाण कषायपाहुड के विषय को संक्षेप में 180 गाथाओं में समाहित किया है और इस विषय को स्पष्ट करने के लिए 53 विवरण-गाथाओं का भी निर्माण किया है।

'पेज्ज' शब्द का अर्थ राग है और दोस का अर्थ द्वेष है। अर्थात् यह ग्रन्थ राग और द्वेष का निरूपण करता है।

इसमें राग-द्वेष-मोह का विवेचन करने के लिए कर्मों की विभिन्न स्थितियों का चित्रण किया गया है। क्रोध-मान-माया-लोभादि कषायों की रागद्वेष में परिवर्तन सम्बन्धी विशेषताओं का विवेचन ही इस ग्रन्थ का मूल विषय है। यह ग्रन्थ सूत्रशैली में निबद्ध है। आचार्य गुणधर ने कठिन और विस्तृत विषय को अत्यन्त संक्षेप में प्रस्तुत कर सूत्रपरम्परा का आरम्भ किया है।

इस ग्रन्थ में 15 अधिकार हैं, और 180 + 53 = 233 गाथाएँ हैं।

इस ग्रन्थ में क्रोध, मान, माया और लोभ—इन चारों कषायों को विस्तार से समझाया है। इनके भेद-प्रभेद को विस्तार से समझाते हुए इनसे दूर रहने की शिक्षा दी है। जब तक आत्मा राग और द्वेष आदि कषायों से लिप्त रहेगा, तब तक शुद्ध स्वच्छ एवं धवल नहीं हो पाएगा। इस ग्रन्थ का मुख्य विषय यही है कि आत्मा शुद्ध, निर्मल, धवल है। इसे क्रोधादि कषायों से अशुद्ध नहीं करना चाहिए।

विशेष : यह ग्रन्थ करणानुयोग का विशेष ग्रन्थ है। इसमें कर्म सिद्धान्त का विशेष वर्णन है। मनोविज्ञान की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ विशेष महत्त्वपूर्ण है। आगम और तीर्थंकर की साक्षात् वाणी समझा जानेवाला यह ग्रन्थ जैनदर्शन में अपना विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।